दैनिक ट्रिब्यून
16 जून 2004
16/06/2004

नागालैंड में अटकी पूर्वोत्तर की शांति प्रक्रिया



प्रश्न है कि जब एनएससीएन के दोनों धड़ों के साथ युद्धविराम समझौता किया गया है तो असम में उल्फा, नेशनल डेमोक्रेटिक फ्रंट ऑफ बोडोलैंड और कामतापुर लिबरेशन ऑगर्जेनाइजेशन के खिलाफ सैनिक कार्रवाई क्यों जारी रही, तथा वहां शांति के लिए भूटान की शाही सेना की मदद क्यों ली गई? असम की प्रफुल्ल महंत सरकार की उल्फा से मिलीभगत की गुप्त रिपोर्ट तत्कालीन राज्यपाल ले. जनरल (सेवानिवृत्त) एस.के. सिन्हा ने स्वयं केन्द्र को भेजी थी और केंद्र सरकार आंखें मूंदे रही।

पूर्वोत्तर का सबसे जटिल और पुराना संकट है नेशनल सोसलिस्ट कौंसिल ऑफ नागालैंड (एनएससीएन), जिसके नेताओं को शांति के रास्ते पर लाने में पूर्व गृह सचिव के. पद्मनाभैया को भाजपा नेतृत्व वाले राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन सरकार के दौरान केंद्र के दूत के रूप में थोड़ी सी कामयाबी मिली। इस प्रक्रिया को जारी रखने के उद्देश्य से कांग्रेस नीत नयी सरकार ने उन्हें अपने पद पर बरकरार रखा और इस बात पर संतोष व्यक्त करते हुए पद्मनाभैया ने कहने को कह तो दिया कि केंद्र में सत्ता परिवर्तन से शांति में कोई अड़चन नहीं आएगी, लेकिन ऐसा कहना जितना आसान है, उसका व्यावहारिक रूप में लगू होना उतना ही कठिन। प्रधानमंत्री के रूप में मनमोहन सिंह उत्तर पूर्वी राज्यों के लिए ज्यादा संवेदनशील हो सकते हैं, क्योंकि वे विद्रोही गतिविधियों के जबर्दस्त गढ़ असम से राज्यसभा के सदस्य हैं। कश्मीर में हुर्रियत नेताओं से बातचीत करने के लिए केंद्र के मध्यस्थ एन.एन. वोहरा का भी इस्तीफा उन्होंने नामंजूर कर दिया और वोहरा से कहा कि अपना काम जारी रखें। जाहिर है कि मनमोहन सिंह यह संदेश देना चाहते हैं कि पूर्व सरकार के सार्थक कामों में राजनीतिक मतभेद बाधक नहीं होंगे। लेकिन पूर्वोत्तर की शांति प्रक्रियाएं कश्मीर से ज्यादा उलझन में डालने वाली हैं और यहां की विद्रोही गतिविधियों पर काबू पाने के लिए जिस तरह से बल प्रयोग तथा बातचीत के नुस्खे आजमाए गए उससे दिन-ब-दिन दिग्भ्रमित स्थिति पैदा होती जा रही है, जिसका आने वाले समय में समाधान खोजना आसान नहीं होगा।

शुरुआत एनएससीएन से ही करते हैं, जिसके साथ अपनायी गई अब तक की सारी नीतियां भ्रम पैदा करने वाली हैं--चाहे वो हिंसा की हों अथवा शांति की और इसके विस्तार में जाने पर केंद्र, सुरक्षा बल तथा एनएससीएन नेता अंतहीन रास्ते पर आगे बढ़ते नजर आते हैं। इससे एक ओर जहां विद्रोही नागा नेताओं के साथ शांति समझौता अधर में लटका हुआ है, वहीं अन्य राज्यों में विद्रोही गुटों के साथ समझौते के प्रयास में भी पैबंद लग गए हैं। इसके राजनीतिक पहलू भी आम चुनाव के बाद उभरकर सामने आए हैं।

एनएससीएन का खूनी संघर्ष भारत का ही नहीं, विश्व का सबसे पुराना है जिसके संचालक हैं आइसाक चिशी स्वू और एन. मुइवा। इनकी लड़ाई अधिकारों के लिए नहीं, आजादी के लिए है और वो भी आजादी चाहिए भारत से अलग, एक स्वतंत्र नागालैंड स्थापित करने की। इनका दावा है कि नागालैंड भारत से पहले आजाद हो चुका था। इसकी शुरुआत नागा आंदोलन की नींव रखने वाले ए.जेड. फिजो ने की, जिनकी पुत्री एदिनो फिजो एक अलग गुट नागा नेशनल कौंसिल चलाती हैं और प्रस्तावित 'पृथक नागा राष्ट्र' का अपने को सही प्रतिनिधि बताती हैं। नागा लोग 16 मई को जनमत संग्रह दिवस और 14 अगस्त को स्वतंत्रता दिवस मनाते हैं। मुइवा और आइसाक चिशी का यह भी दावा है कि महात्मा गांधी ने अलग नागालैंड की मांग का समर्थन किया था। मगर ये सब बातें तब उजागर हुई हैं, जब केंद्र सरकार की ओर से शांति बातचीत की पहल की गई। पहले युद्ध विराम संधि हुई (1987) और फिर इन नेताओं का कभी बैंकाक, कभी एम्सटर्डम तो कभी टोक्यो में भारतीय नेताओं के साथ मिलने-जुलने का सिलसिला चला। उसी दौरान केंद्र को एनएससीएन के एक और शक्तिशाली गुट (खपलांग के नेतृत्व वाला) के साथ भी युद्ध विराम समझौता करना पड़ा (1989)। खपलांग अलबत्ता पहले से ही स्थापित नागालैंड और म्यांमार की सीमा से सटे नागा आबादी वाले इलाके को अलग नागालैंड देश घोषित कर चुके हैं तथा अपने को वहां का स्वयंभू राष्ट्रपति बताते हैं। इनके प्रधानमंत्री हैं--झिमोमी।

मुइवा और चिशी दोनों ही अपनी उम्र के 75 वर्ष बीहड़ों में गुजार चुके। शांति का रास्ता दोनों ने ही हताशा में चुना लेकिन बंदूक की नोक आगे करके। पूर्वोत्तर की हिंसा का पहले कांग्रेस ने अपने राजनीतिक लाभ के लिए इस्तेमाल किया और हाल में भाजपा ने। चूंकि कांग्रेस ज्यादा समय तक केंद्र में सत्ता में रही, इसलिए उसे ज्यादा फायदा मिलना स्वाभाविक है। भाजपा की कम समय की बैटिंग की उपलब्धि भी उल्लेखनीय है। केंद्र ने भी जब यह अच्छी तरह महसूस कर लिया कि बलपूर्वक नागा हिंसा पर काबू पाना संभव नहीं है तो शांति का दांव फेंका, लेकिन उसी आड़ में राजनीतिक उद्देश्य भी काम कर रहे थे। मुइवा और चिशी कहते रहे कि उन्हें तो तमाम नागा आबादी वाले इलाकों को मिलाकर अलग नागालैंड से कम कुछ भी स्वीकार्य नहीं होगा, जिनमें असम, मणिपुर, मेघालय और अरुणाचल प्रदेश के नागा बहुल इलाके होंगे। आडवाणी जी ऐसे सवालों का गोलमटोल जवाब देते रहे, इन राज्यों को भी आश्वासन मिलता रहा कि उनकी सीमाओं के साथ खिलवाड़ नहीं किया जाएगा और भाजपा अपनी राजनीतिक रोटी सेंकती रही। शांति समझौता नहीं हुआ कैसे होगा, कब होगा यह भी अनिश्चित है लेकिन एनएससीएन के साथ राजनीतिक तालमेल भाजपा ने कर लिया, जिसका उद्देश्य था नागालैंड में कांग्रेस सरकार को उखाड़ फेंकना। नागालैंड विधानसभा के चुनाव में एनएससीएन के सहयोग से भाजपा ने खाता खोला और उसके साथ ही पड़ोसी मणिपुर, मेघालय व अरुणाचल प्रदेश में जोड़-तोड़ का सिलसिला शुरू हो गया। एनएससीएन के दूसरे धड़े खपलांग गुट को कह दिया गया कि भविष्य में जब भी बातचीत होगी, उसे बुलाया जाएगा। नागा नेशनल कौंसिल नेता एदिनो फिजो को भी समझा दिया गया। इन दोनों गुटों ने सवाल उठाया था कि किस आधार पर मुइवा को बुलाया गया और उन्हें नहीं।

भाजपा अपने अभियान में जुटी रही। लोकसभा चुनाव करीब आते-आते आडवाणी ने नेशनल लिबरेशन फ्रंट ऑफ त्रिपुरा के साथ युद्धविराम समझौता कर लिया (15 अप्रैल) और असम के बोडो उग्रवादियों के एक गुट बोडो लिबरेशन टाइगर्स (बीएलटी) को खुश करने के लिए स्वायत्तता संधि कर ली। केंद्र में नयी सरकार के बनते ही त्रिपुरा की वामपंथी सरकार ने कह दिया कि एनएलएफटी (नेशनल लिबरेशन फ्रंट ऑफ त्रिपुरा) के साथ समझौते की अवधि छह महीने से ज्यादा नहीं बढ़ायी जाएगी।

भ्रामक नीतियां
मयंक शेखर

अरुणाचल प्रदेश के चकमा आदिवासियों को चुनाव से ठीक पहले वोट डालने का अधिकार दे दिया गया, जिनकी नागरिकता को लेकर ही विवाद छिड़ा हुआ है।

प्रश्न है कि जब एनएससीएन के दोनों धड़ों के साथ युद्धविराम समझौता किया गया है तो असम में उल्फा, नेशनल डेमोक्रेटिक फ्रंट ऑफ बोडोलैंड और कामतापुर लिबरेशन ऑगर्जेनाइजेशन के खिलाफ सैनिक कार्रवाई क्यों जारी रही, तथा वहां शांति के लिए भूटान की शाही सेना की मदद क्यों ली गई? असशम की प्रफुल्ल महंत सरकार की उल्फा से मिलीभगत की गुप्त रिपोर्ट तत्कालीन राज्यपाल ले. जनरल (सेवानिवृत्त) एस.के. सिन्हा ने स्वयं केन्द्र को भेजी थी और केंद्र सरकार आंखें मूंदे रही। तरुण गोगोई ने कांग्रेस सरकार की कमान संभालने के बाद यह मुद्दा उठाया कि जब बोडो और नागा उग्रवादियों से बातचीत संभव है तो उल्फा से क्यों नहीं। उसके जवाब में केन्द्र ने उल्फा पर काबू पाने के लिए भूटान की शाही सेना की मदद ली। साथ-साथ उल्फा के नेस्तनाबूद होने का दावा भी कर दिया गया जबकि उल्फा के शीर्ष नेता आज भी बंगलादेश में ऐश कर रहे हैं। भूटान सरकार ने जितने उल्फा उग्रवादियों के मारे जाने और हथियार बरामद होने का दावा किया, उस पर भी संदेश व्यक्त किया जा रहा है।

मणिपुर में उपद्रवग्रस्त क्षेत्र अधिनियम 1958 के तहत केंद्रीय सुरक्षाबलों की तैनाती 24 वर्षों से चली आ रही है और आज तक वहां अनुकूल राजनीतिक और सामाजिक स्थिति पैदा नहीं हो पायी। वहां के लोग इनसे त्रस्त हैं। इसकी वजह यह है कि इस क्षेत्र की जनता को विश्वास में लेने के बजाय उनका विद्रोहियों के जरिए और स्थानीय नेताओं के जरिए राजनीतिक इस्तेमाल किया गया। विद्रोहियों और ईसाई मिशनरियों के प्रभाव में अलगाववाद पनपा और वहां के लोगों ने लगातार अपने को अलग-थलग महसूस किया। सिर से जब पानी गुजर गया, तब हायतोबा मचाया जा रहा है जो हवा में लहरा रहा है। उत्तर पूर्व को रेलमार्ग से जोड़ने के निर्णय अभी क्यों जब वहां की जनता विद्रोहियों के प्रभाव में दिल्ली को अपना नहीं मानती? विद्रोहियों के लिए शांति का मार्ग तब तक नहीं खोला जाता जब तक हिंसा काबू से बाहर न हो जाए और उसके माध्यम से राजनीति करने की गुंजाइश न हो। कश्मीर में ऊधमपुर से रेल लाइन बिछाने का फैसला करने में 50 वर्ष से ज्यादा क्यों लग गए। इन दोनों क्षेत्रों की स्थिति में कोई खास फर्क नहीं है। उत्तर पूर्व के छात्र संगठनों ने हिंदी फिल्मों के प्रदर्शन पर रोक लगा दी है। पूर्वोत्तर के सारे मुख्यमंत्री भेदभावपूर्ण रवैये पर एकमत हैं। असम समझौता तब तक नहीं हुआ जब तक पूरे प्रदेश में आग नहीं लगी।

पूर्वोत्तर की शांति प्रक्रिया फिलहाल नागालैंड में अटकी है, जहां अब गेंद कांग्रेस के पाले में है। यहां की अमूमन सभी शांति प्रक्रियाएं कांग्रेस की देन हैं। राजीव गांधी ने मृत्यु से कुछ दिन पहले नागा नेताओं से बातचीत की इच्छा जाहिर की थी। आज परिस्थिति दूसरी है। एनएनसीएन नागालैंड और आसपास में कांग्रेस सरकार को गिराने में कामयाब रहा। मनमोहन सिंह की राज्यसभा सदस्य के रूप में छवि अच्छी रही है क्योंकि उन्होंने अपने सांसद कोटे का अधिकांश हिस्सा असम में विकास कार्यों पर खर्च किया। नागालैंड से चुने गये नय लोकसभा सदस्य वांग्यू कोन्यक ने पड़ोसी राज्यों के इलाकों को मिलाकर नागालैंड बनाने की मांग पर असहमति जाहिर की है जबकि उन्हें जिताने में नागा नेताओं का योगदान है। नागालैंड में कांग्रेस विरोधी सरकार का रवैया इस बात पर निर्भर है कि मनमोहन सिंह कैसे शांति प्रक्रिया को आगे बढ़ाते हैं जिससे अन्य राज्यों की भी शांति प्रक्रिया जुड़ी है।

केंद्र की भाजपा सरकार ने नागालैंड के कांग्रेसी मुख्यमंत्री एस.सी. जमीर के साथ कभी कोई मशविरा नहीं दिया। एनएससीएन नेताओं से संपर्क साधने के लिए मिजोरम के मुख्यमंत्री जोरमथंगा की मदद ली जाती थी एक अहम सवाल उठेगा अगर त्रिपुरा के मुख्यमंत्री मानिक सरकार एनएलएफटी के साथ युद्धविराम संधि को वाकई छह महीने से आगे बढ़ाने को सहमत नहीं होंगे क्योंकि उन्होंने यह बात विधानसभा में कही है और उनसे मशविरा करके यह समझौता हुआ है जिसकी अवधि अगस्त में समाप्त हो रही है। उधर एनएससीएन के दोनों धड़ों के साथ युद्ध विराम समझौते की अवधि बार-बार बढ़ायी जा रही है।